(२०१९) १२ एस.सी.आर. २५५

दीनानाथ (मृत) द्वारा विधिक प्रतिनिधिगण व एक अन्य

विरूद्ध

सुभाष चंद सैनी एवं अन्य

(सिविल अपील क्रमांक ४५६३/२०१४)

२४ सितम्बर, २०१९

(न्यायमूर्ति अरूण मिश्रा, न्यायमूर्ति एम.आर. शाह एवं न्यायमूर्ति अजय रस्तोगी)

दिल्ली किराया नियंत्रण अधिनियम, १९५८ः धारा १५ (७) बेदखली याचिका लंबित रहने के दौरान किराएदार का बचाव समाप्त करने की किराया नियंत्रक की शक्ति - प्रकृति - अभिनिर्धारित - धारा १५ (७) द्वारा निहित शक्ति विवेकीय है न कि आज्ञापक - यह अवज्ञाकारी या जानबूझकर की गई चूक पर निर्भर करता है तथा इसे सामंजस्य रूप से समझा जाना चाहिए जिससे किराएदार एवं मकान मालिक के अधिकारों एवं दायित्वों में संतुलन किया जा सके - धारा १५ (७) की शक्ति असाधारण होने से सम्यक् देखभाल एवं सावधानी के साथ उपयोग की जानी चाहिए - तथ्यात्मक रूप से, किराया नियंत्रक द्वारा आदेश पारित करने की दिनांक को, जमा किये जाने हेतु आदेशित किए गए संपूर्ण बकाए को किराएदारों द्वारा अदा किया जा चुका था तथा बचाव समाप्त करने के किराया नियंत्रक के आदेश की दिनांक को भी मध्यवर्ती अवधि का तथा आगे का भी किराया अदा किया जा चुका था - इस प्रकार, किराएदारों के विरूद्ध भुगतान करने में अवज्ञाकारी विफलता या जानबूझकर चूक का आरोप आधारहीन है- किराएदार के बचाव को समाप्त करने का किराया नियंत्रक का निर्णय, जिसे उच्च न्यायालय द्वारा यथावत रखा गया है, विवेकपूर्ण एवं सावधानीपूर्वक नहीं किया गया है और इस प्रकार यह स्थिर रखे जाने योग्य नहीं है और अपास्त किया जाता है।

अपील को स्वीकार करते हुये, न्यायालय द्वारा

अभिनिर्धारितः १.१ दिल्ली और अजमेर किराया नियंत्रण अधिनियम, १९५२ की धारा १३ (५) में भाषा यह थी कि किराएदार के विधि के अधिदेश की शर्तों के अनुरूप किराया जमा करने में विफल रहने पर "न्यायालय निष्कासन के विरूद्ध बचाव को समाप्त करने का आदेश करेगा।" दिल्ली किराया नियंत्रण अधिनियम, १९५८ में धारा १५ (७) किराएदार के अधिनियम द्वारा अपेक्षित भुगतान जमा करने में विफल रहने के सम्बन्ध में है। किराया नियंत्रक के पास प्रत्येक मामले के तथ्य व परिस्थितियों पर विचार करने तथा विधि के अनुरूप विवेकपूर्ण तरीके से अपने विवेक का प्रयोग करने का विवेकाधिकार है। "न्यायालय निष्कासन के विरूद्ध बचाव समाप्त करने का आदेश देगा" से "नियंत्रक बेदखली के विरूद्ध बचाव समाप्त करने का आदेश कर सकेगा" में किया गया शब्दों का परिवर्तन किराएदार के पक्ष में विधि में जानबूझकर किया गया संशोधन है। यदि किराए के भुगतान या जमा किए जाने में विफलता सिद्ध हो जाती है,

तो १९५२ के अधिनियम के अधीन न्यायालय के पास बचाव समाप्त करने के अतिरिक्त कोई विकल्प नहीं था; १९५८ के अधिनियम के अन्तर्गत, नियंत्रक जिसने न्यायालय का स्थान लिया है, के पास विवेकाधिकार है, जिससे समुचित मामलों में, किराए के भुगतान में चूक होने पर भी यदि वह न्यायिक विवेक का प्रयोग करते हुए अभिलेख की सामग्री के आधार पर संतुष्ट है तो किसी मामले के तथ्य व परिस्थितियों में बचाव समाप्त करने से इंकार कर सकता है। अधिनियम, १९५२ की धारा १३ (५) एवं अधिनियम, १९५८ की धारा १५ (७) की तुलना करने पर अपरिहार्य परिणाम यह होगा कि अधिनियम, १९५८ की धारा १५ (१) के अन्तर्गत पारित किए गए आदेश के अनुपालन में किराया अदा करने में की गई चूक की स्थिति में न्यायालय बचाव समाप्त करने के लिए बाध्य नहीं होगा तथा विवेकाधिकार, जो निश्चित ही न्यायपूर्ण दृष्टिकोण व सावधानीपूर्वक हो, का प्रयोग करते समय नियंत्रक के लिए प्रत्येक मामले के तथ्यों का परीक्षण किया जाना सदैव अनुज्ञेय है।
(कण्डिका १४, १५, १७)

१.२ किराएदार की ओर से किराए का भुगतान करने की विफलता मात्र बचाव समाप्त करने के आदेश को उचित ठहराने के लिए पर्याप्त नहीं है। यह केवल एक ऐच्छिक विफलता, जानबूझकर की गई चूक या स्वैच्छिक अननुपालन है जो न्यायालय में निहित असाधारण शक्ति के प्रयोग को आवश्यक बनाता है। इससे भी महत्वपूर्ण है कि अधिनियम १९५८ की धारा १५ (७) की बचाव समाप्त करने या न करने की न्यायालय की विवेकीय शक्ति की प्रचुरता किराया नियंत्रक के पास है; कहने की आवश्यकता नहीं है कि अधिनियम १९५८ की धारा १५ (७) के अन्तर्गत बचाव समाप्त करने का प्रभाव किराएदार को धारा १४ के अन्तर्गत उसे उपलब्ध संरक्षण से वंचित करने का होता है तथा यह अनिवार्य है कि अधिनियम १९५८ की धारा १५ (७) के अन्तर्गत किराया नियंत्रक में निहित ऐसी शक्ति का प्रयोग सम्यक् देखभाल एवं सावधानीपूर्वक किया जाना चाहिए। अधिनियम १९५८ की धारा १५ (७) के अन्तर्गत निहित शक्ति विवेकीय है तथा आज्ञापक नहीं है तथा अवज्ञाकारी एवं जानबूझकर की गई चूक पर निर्भर करती है तथा इसे सामंजस्य रूप से समझा जाना चाहिए जिससे किराएदार एवं मकान मालिक के अधिकारों एवं दायित्वों में संतुलन किया जा सके तथा अधिनियम १९५८ की धारा १५ (७) की शक्ति असाधारण होने से सम्यक् देखभाल व सावधानी के साथ उपयोग की जानी चाहिए। (कण्डिका १९, २४)

२.१ किराया नियंत्रक द्वारा पारित आदेश की दिनांक को ही, अपीलार्थीगण द्वारा जमा किए जाने हेतु निर्देशित बकाया का भुगतान किया गया था और किराया नियंत्रक द्वारा बचाव समाप्त करने के आदेश की दिनांक को भी, सम्पूर्ण मध्यवर्ती अवधि और उसके आगे के लिए किराए का भुगतान किया जा चुका था और ऐसा प्रतीत होता है कि उन

महीनों के लिए उपयुक्त मिलान और समायोजन किए जाने की आवश्यकता थी जिनके लिए किराया देय था लेकिन जिस बात पर विवाद नहीं किया जा सकता वह यह है कि किराया नियंत्रक के निर्देशों के अनुसार अपीलार्थीगण को जिस राशि का भुगतान करने के लिए कहा गया था उसके अनुसरण में जो सभी सुसंगत समय पर जमा/भुगतान की गई वह मकान मालिक को देय से अधिक थी। उक्त परिस्थिति में, अपीलार्थीगण-किराएदारों के विरूद्ध भुगतान करने में अवज्ञाकारी विफलता और जानबूझकर चूक का आरोप आधारहीन है। (कण्डिका २९)

२.२ पट्टान्तरित परिसर के लिए देय किराए की राशि एक ऐसा कारक हो सकती है, जिसे दरकिनार नहीं किया जा सकता है किन्तु हस्तगत मामले के तथ्य व परिस्थितियां मकान मालिक को देय किसी राशि के भुगतान न करने में किसी ऐसी लापरवाही, अनादर या अवज्ञा को नहीं सुझाती हैं जो उस "असाधारण कदम" को अनुज्ञात करे जिससे किराएदार प्रत्यर्थीगण-मकानमालिक के विरूद्ध अपने विवाद में प्रतिरक्षाविहीन हो जाए। (कण्डिका ३०)

२.३ किराया नियंत्रक का निर्णय जो उच्च न्यायालय के एकल न्यायाधीश द्वारा पुष्ट है और जिसके द्वारा अपीलार्थीगण के बचाव समाप्त करने के निर्णय को यथावत रखा गया है जिससे उनके बेदखली याचिका को लड़ने और बचाव लेने से वंचित हो जाने से निश्चित ही प्रतिकूल परिणाम होते हैं, विवेकपूर्ण तथा सावधानीपूर्वक नहीं किया गया है तथा उपरोक्त कारणों से आक्षेपित निर्णय स्थिर रखे जाने योग्य नहीं है तथा अपास्त किया जाता है। (कण्डिका ३१)

अशोका मार्केटिंग लिमि. एवं एक अन्य विरूद्ध पंजाब नेशनल बैंक एवं अन्य **(१९९०) ४ एस.सी.सी. ४०६: [१९९०] ३ एस.सी.आर. ६४९;** सुश्री संतोष मेहता विरूद्ध ओम प्रकाश एवं अन्य **(१९८०)३ एस.सी.सी. ६१०: [१९८०] ३ एस.सी.आर. ३२५;** श्रीमती कमला देवी विरूद्ध श्री वासुदेव **(१९९५)१ एस.सी.सी. ३५६: [१९९४] ६ सप्ली. एस.सी.आर. ६०३;** मेसर्स जैन मोटर कार कं., दिल्ली विरूद्ध श्रीमती स्वयं प्रभा जैन एवं एक अन्य **(१९९६) ३ एस.सी.सी. ५५: [१९९६] २ एस.सी.आर. ६६३;** एयरो ट्रेडर्स (पी.) लिमि. विरूद्ध रविन्दर कुमार सूरी **(२००४) ८ एस.सी.सी. ३०७;** अमृत लाल विरूद्ध शिव नारायण गुप्ता **(२०१०) १५ एस.सी.सी. ५१०** - संदर्भित-

<u>संदर्भित केस लॉ</u>

[१९९०] ३ एस.सी.आर. ६४९	**संदर्भित**	**कण्डिका ११**
[१९८०] ३ एस.सी.आर. ३२५	**संदर्भित**	**कण्डिका १८**
[१९९४] ६ सप्ली. एस.सी.आर. ६०३	**संदर्भित**	**कण्डिका २०**

[१९९६] २ एस.सी.आर. ६६३	**संदर्भित**	**कण्डिका २१**
(२००४) ८ एस.सी.सी. ३०७	**संदर्भित**	**कण्डिका २२**
(२०१०) १५ एस.सी.सी. ५१०	**संदर्भित**	**कण्डिका २३**

सिविल अपील क्षेत्राधिकारः सिविल अपील क्रमांक ४५६३/२०१४

दिल्ली उच्च न्यायालय नई दिल्ली, द्वारा सिविल विविध (एम) क्रमांक ४४/२०११ में पारित निर्णय व आदेश दिनांक १० मई, २०११ से उद्भूत

अपीलार्थीगण की ओर से ब्रहम एस. नागर एवं अशोक माथुर अधिवक्तागण

प्रत्यर्थीगण की ओर से अमिताभ कृष्ण, प्रनेश, रोहित कुमार एवं एस.एस. बन्धोपाध्याय अधिवक्तागण

न्यायमूर्ति रस्तोगी द्वारा निर्णय दिया गया-

१- यह अपील अपीलार्थीगण (किराएदारों) द्वारा भारतीय संविधान के अनुच्छेद २२७ के अन्तर्गत दिल्ली उच्च न्यायालय द्वारा सिविल विविध (एम) क्रमांक ४४/२०११ में पारित निर्णय व आदेश दिनांक १० मई, २०११ के विरूद्ध प्रस्तुत की गई है जिसके द्वारा अपीलार्थीगण की किराया अदा करने में आक्षेपित विफलता के कारण किराया नियंत्रक द्वारा बचाव समाप्त करने के आदेश को यथावत रखा गया है।

२- प्रकरण पूर्व में दो न्यायाधीशगण की पीठ द्वारा सुना गया था तथा विधि के इस सिध्दांत पर मतैक्य था कि धारा १५ (७) दिल्ली किराया नियंत्रण अधिनियम, १९५८ (जिसे अत्र पश्चात अधिनियम १९५८ से संदर्भित किया जा रहा है) के अन्तर्गत किराया नियंत्रक की बचाव समाप्त करने की शक्ति विवेकीय है न कि आज्ञापक तथा यह अनिवार्य है कि किराया नियंत्रक द्वारा अधिनियम १९५८ की धारा १५ (१) के अन्तर्गत दिए गए निर्देशों के क्रियान्वयन का प्रत्येक उल्लंघन स्वमेव किराएदार के बचाव को समाप्त करने की अनुमति देता है तथा इसका प्रयोग केवल तभी किया जाना चाहिए जब किराएदार जानबूझकर, अवज्ञापूर्वक या लापरवाहीपूर्वक उससे देय किराया जमा करने में विफल रहता है किन्तु इस प्रकरण के तथ्यों पर राय में अन्तर था इसलिए प्रकरण हमारे समक्ष रखा गया।

३- तथ्य जो वर्तमान उद्देश्य के लिए प्रासंगिक तथा अभिलेख से प्रकट हैं, संक्षेप में इस प्रकार हैं कि अपीलार्थीगण-किराएदारों ने दुकान क्रमांक १४४५-ए, दरीबा कलां, दिल्ली को ६६/- रूपये प्रतिमाह किराए की किराएदारी पर लिया था। प्रत्यर्थीगण-वादीगण उक्त पट्टान्तरित परिसर के संयुक्त स्वामी हैं। दुकान का किराया प्रत्यर्थी क्रमांक ०१ को अदा किया जाना है जिसके पास किराया संकलित करने का प्रत्यर्थीयों का मुख्तारनामा है। नवम्बर, २००७ में प्रत्यर्थीगण (मकान मालिक) द्वारा अधिनियम १९५८ की धारा १४ (a)(b)(c) एवं (j) के अन्तर्गत एक बेदखली याचिका किराया परिसर के कब्जा वापिसी की आज्ञप्ति

हेतु कई कारणों पर प्रस्तुत की गई। इस स्तर पर हम पट्टान्तरित परिसर की बेदखली के आधारों पर विस्तार नहीं कर रहे हैं क्योंकि यह किराया नियंत्रक जिसके समक्ष बेदखली याचिका न्यायिक निर्णय हेतु लंबित है, के द्वारा परीक्षण की विषयवस्तु है।

४- अपीलार्थीगण द्वारा दिनांक ०७ फरवरी, २००८ को प्रत्यर्थीगण द्वारा बेदखली याचिका में लगाए गए आक्षेपों को विवादित करते हुए लिखित वादोत्तर प्रस्तुत किया गया। चूंकि प्रत्यर्थीगण द्वारा बेदखली हेतु प्रार्थित आधारों में से एक किराए का अदा न किया जाना था जिसमें दिनांक २१ अप्रैल, २००८ को अधिनियम १९५८ की धारा १५ (१) के अन्तर्गत आदेश पारित किया गया। आदेश दिनांक २१ अप्रैल, २००८ को उद्धत करना उचित होगा जो निम्नानुसार है-

"किराया नियंत्रण अधिकरण-दिल्ली"

E- 931/07

२१-०४-०८

डी.आर.सी. अधिनियम की धारा १५ (१) के अधीन तर्क श्रवण किए गए। किराए की दर व सम्बन्ध को लेकर पक्षकारों के मध्य विवाद नहीं है हालांकि याचिकाकर्ता दावा करता है कि बकाया दिनांक ०१-०१-२००७ से है तथा प्रत्यर्थी का कहना है कि उसने अक्टूबर, २००७ तक किराए का भुगतान कर दिया है।

चूंकि डी.आर.सी. अधिनियम की धारा १५ (१) के अन्तर्गत आदेश स्वीकृत तथ्यों पर पारित किया जाना है इसलिए प्रत्यर्थी को निर्देशित किया जाता है कि दिनांक ०१-११-२००७ से लेकर आज दिनांक तक के बकाया ६६/- रूपये प्रतिमाह का किराया आज से तीस दिवस की अवधि में जमा करे तथा भविष्य के किराए को उसी दर पर महीने दर महीने उत्तरवर्ती अंग्रेजी कैलैण्डर महीने की १५ तारीख से पूर्व भुगतान करना या जमा करना जारी रखे।

एस.डी./-

ए.आर.सी./दिल्ली/२१-०४-२००८"

५- अधिनियम १९५८ की धारा १५ (१) के आदेश के अधीन अपीलार्थीगण-किराएदारों को दिनांक ०१ नवम्बर, २००७ से अब तक के ६६/- रुपये प्रतिमाह के बकाया किराए का तीस दिवस में भुगतान या जमा करना था तथा भविष्य के किराए को उसी दर पर महीने दर महीने उत्तरवर्ती कैलैण्डर महीने की १५ तारीख तक भुगतान करना या जमा करना था।

६- २१ अप्रैल, २००८ के आदेश के अननुपालन के कारण, जैसा आक्षेपित था, प्रत्यर्थीगण द्वारा दिनांक २८ अप्रैल, २००९ को अपीलार्थीगण के बचाव को समाप्त करने की प्रार्थना के साथ एक आवेदन अधिनियम १९५८ की धारा १५ (१) के अन्तर्गत प्रस्तुत किया गया।

७- अपीलार्थीगण द्वारा उक्त आवेदन का स्वयं की ओर से लिखित उत्तर प्रस्तुत किया गया तथा कण्डिका ०३ व ०४ में विशिष्ट रूप से कथन किया गया कि ०१ नवम्बर, २००७ से देय बकाया के साथ दस महीने का अग्रिम किराया जमा किया गया था और २१ अप्रैल, २००८ को जमा किए गए अग्रिम किराए के समायोजन पर, मासिक किराया जो बाद में जमा किया गया, व्यवहारिक रूप् से अग्रिम के रूप में भुगतान किया गया तथा २१ अप्रैल, २००८ के आदेश में कोई चूक नहीं की गई थी।

८- पक्षकारों के परस्पर विरोधी दावों को विचार मे लेते हुए आदेश दिनांक १४ सितम्बर, २००९ द्वारा किराया नियंत्रक ने प्रत्यर्थीगण-मकान मालिक के अधिनियम १९५८ की धारा १५ (७) के आवेदन को स्वीकार किया तथा लंबित बेदखली याचिका में अपीलार्थीगण के बचाव को समाप्त कर दिया। किराया नियंत्रक के आदेश से असंतुष्ट होकर अपीलार्थीगण ने किराया नियंत्रण अधिकरण का रूख किया। आदेश दिनांक २४ मई, २०१० द्वारा किराया नियंत्रण अधिकरण ने अपील निरस्त की तथा असंतुष्ट होने के कारण अपीलार्थीगण ने आगे भारत के संविधान के अनुच्छेद २२७ का प्रयोग करते हुए उच्च न्यायालय का रूख किया और जो निर्णय व आदेश दिनांक ११ मई, २०११ द्वारा निरस्त हुई जिसे इस सिविल अपील में हमारे समक्ष चुनौती दी गई है।

९- विचार के लिए विवादास्पद प्रश्न यह है कि क्या अधिनियम १९५८ की धारा १५ (७) के अन्तर्गत किराया नियंत्रक में निहित शक्ति विवेकीय है तथा बेदखली की कार्यवाही में अपीलार्थीगण (किराएदारों) के बचाव को समाप्त करने के लिए इस मामले के तथ्यों में विवेकपूर्ण रूप से प्रयोग की गई है।

१०- किराएदार के बचाव को समाप्त करने के प्रश्न से सुसंगत तथ्यों की ओर जाने के पूर्व हमारे लिए अधिनियम १९५८ की योजना को देखना उचित होगा।

११- अधिनियम १९५८ के उद्देश्य व कारण का कथन **अशोका मार्केटिंग लिमि. व एक अन्य विरूद्ध पंजाब नेशनल बैंक व अन्य'** में इस न्यायालय की संवैधानिक पीठ के समक्ष विचार हेतु आया जिसमें इस न्यायालय द्वारा अभिनिर्धारित किया गया कि अधिनियम का उद्देश्य अन्य बातों के साथ-साथ, किराएदारों को बेदखली के विरूद्ध सुरक्षा का वृद्ध उपाय देना है। इस न्यायालय ने टिप्पणी कीः

" ..... दिल्ली किराया नियंत्रण अधिनियम के उद्देश्य व कारण का कथन इंगित करता है कि यह इस दृष्टि से अधिनियमित किया गया है;

(ए) किराएदारों व मकान मालिकों के मध्य कार्यवाहियों के शीघ्र निणर्यन की उपयुक्त व्यवस्था प्रदान करना;

(बी) परिसरों की विभिन्न श्रेणियों के किराएदारों द्वारा देय मानक किराए के निर्धारण के लिए प्रावधान करना जो किराएदारों के लिए उचित होना चाहिए और साथ ही मौजूदा मकानों को अच्छी मरम्मत में रखने व मकान निर्माण में आगे निवेश को प्रोत्साहन करने हेतु प्रावधान करना; तथा

(सी) किराएदारों को बेदखली के विरूद्ध सुरक्षा के वृहद उपाय प्रदान करना।"

यह इंगित करता है कि किराया नियंत्रण अधिनियम का आधारभूत उद्देश्य किराएदारों व मकान मालिकों के मध्य विवादों के शीघ्र निर्णयन, किराएदारों द्वारा देय मानक किराए के निर्धारण एवं किराएदोरों को बेदखली से सुरक्षा प्रदान करने हेतु प्रावधान करना है। सरकारी परिसरों को किराया नियंत्रण अधिनियम की परिधि से बाहर रखा गया है जिसका तात्पर्य है कि अधिनियम को प्राथमिक रूप से किराएदरों को कतिपय लाभ प्रदत्त करने की दृष्टि से मकान मालिक व किराएदारों के निजी सम्बन्धों को विनियमित करने और इसके साथ ही किराएदारों व मकान मालिकों के मध्य कार्यवाहियों के शीघ्र निर्णयन का प्रावधान कर मकान मालिक के हितों का संतुलन करने हेतु अधिनियमित किया गया है।....."

१२- अधिनियम १९५८ के अधिनियमित किए जाने के पूर्व दिल्ली राज्य में किरायेदारी व बेदखली का विषय दिल्ली एवं अजमेर किराया नियंत्रण अधिनियम १९५२ (जिसे अत्र पश्चात् अधिनियम १९५२ से संदर्भित किया जा रहा है) से शासित होता था। अधिनियम १९५२ की धारा १३ के अन्तर्गत प्रावधानित बेदखली के आधार के अतिरिक्त उक्त उपबंध के अनुरूप अधिनियम १९५८ की धारा १४ में बेदखली के विरूद्ध किराएदारों की सुरक्षा के आधार प्रावधानित है। अधिनियम १९५२ की धारा १३ (५) के अनुरूप प्रावधान अधिनियम १९५८ की धारा १५ (७) में कुछ संशोधन के साथ किया गया है।

१३- महत्वपूर्ण संशोधनों में से एक यह है कि अधिनियम १९५२ की धारा १३ (५) के अन्तर्गत मकान मालिक द्वारा आवेदन "किराएदार द्वारा अन्तिम बार भुगतान की गई दर पर महीने दर महीने किराया जमा करने के आदेश हेतु" सभी निष्कासन के वाद में देना होता था। अधिनियम १९५८ की धारा १५ दो महीने के मांग सूचना पत्र के निर्वहन के उपरांत किराए का बकाया भुगतान रहित रहने के आधार पर कब्जा वापिसी के प्रकरण व अन्य निष्कासन कार्यवाहियों में अन्तर करती है। प्रथम श्रेणी के प्रकरणों में, नियंत्रक अंतिम बार भुगतान की गई दर पर किराए के भुगतान का आदेश कर सकता है जबकि अन्य श्रेणी के मामलों में नियंत्रक ऐसी दर पर भुगतान के लिए आदेश दे सकता है जो विधिक रूप से वसूली योग्य हो।

१४- अन्य उल्लेखनीय अंतर यह है कि अधिनियम १९५२ की धारा १३ (५) आदेश दिनांक से १५ दिवस के अन्दर बकाया किराए के जमा किए जाने या किसी माह के किराए का

अगले माह की १५ तारीख तक जमा करने में किराएदार की विफलता पर बेदखली के विरूद्ध बचाव को समाप्त करने के लिए न्यायालय को बाध्य करती है। भाषा इस प्रकार की थी कि विधि के अधिदेश के अनुसार किराया जमा करने में किराएदार के विफल रहने पर "- न्यायालय निष्कासन के विरूद्ध बचाव को समाप्त करने का आदेश देगा।" अधिनियम १९५८ में धारा १५ (७) किराएदार के अधिनियम द्वारा अपेक्षित किराया जमा करने में विफल रहने के विषय से संबंधित है। किराया नियंत्रक के पास प्रत्येक मामले के तथ्य व परिस्थितियों पर विचार करने तथा विधि के अनुरूप विवेकपूर्ण तरीके से अपने विवेक का प्रयोग करने का विवेकाधिकार है। अधिनियम १९५२ की धारा १३ (५) एवं अधिनियम १९५८ की धारा १५ (७) पर ध्यान देना उचित होगा जो निम्नानुसार हैः-

दिल्ली एवं अजमेर किराया नियंत्रक अधिनियम, १९५२

"१३- बेदखली के विरूद्ध किराएदार का संरक्षणः-

(५) यदि किराएदार निष्कासन के दावे के वाद का विरोध करता है तो वादी-मकान मालिक वाद के किसी भी चरण पर अंतिम बार किए गए भुगतान की दर पर महीने दर महीने किराया जमा करने व बकाया किराए के लिए भी यदि कोई हो, किराएदार को आदेशित करने के लिए आवेदन प्रस्तुत कर सकता है तथा न्यायालय, पक्षकारों को सुनवाई का एक अवसर देने के पश्चात, ऐसी दर जिसे वह उचित समझे पर महीने दर महीने किराया तथा बकाया किराया यदि कोई हो जमा करने का आदेश दे सकता है तथा आदेश दिनांक से १५ दिवस के भीतर बकाया किराया जमा करने तथा उस दर पर किसी माह का किराया आगे आने वाले माह की १५ तारीख तक जमा करने में किराएदार के विफल रहने पर न्यायालय बेदखली के विरूद्ध बचाव समाप्त करने का आदेश करेगा तथा किराएदार को उस स्थिति के समरूप रखा जाएगा जैसे उसने निष्कासन के दावे में प्रतिरक्षा न की हो तथा मकान मालिक परिसर के कब्जा वापिसी की आज्ञप्ति या आदेश के अपने दावे के प्रति किसी पूर्वाग्रह के बिना जमा राशि का प्रत्याहरण कर सकता है।"

दिल्ली किराया नियंत्रण अधिनियम, १९८५

"धारा १५- जब किराएदार बेदखली के विरूद्ध संरक्षण का लाभ प्राप्त कर सकता है"

(७) यदि किराएदार इस धारा द्वारा अपेक्षित भुगतान करने या जमा करने में विफल रहता है तो नियंत्रक बेदखली के विरूद्ध बचाव समाप्त करने का आदेश कर सकेगा एवं आवेदन पर सुनवाई हेतु अग्रसिरत हो सकेगा।"

१५- "न्यायालय निष्कासन के विरूद्ध बचाव समाप्त करने का आदेश करेगा" के शब्दों से "नियंत्रक बेदखली के विरूद्ध बचाव समाप्त करने का आदेश कर सकेगा" के शब्दों में किया गया परिवर्तन किराएदार के पक्ष में जानबूझकर किया गया विधि का संशोधन है। अधिनियम १९५२ के के अन्तर्गत यदि किराए के भुगतान या जमा करने में विफलता सिद्ध होती है, तब न्यायालय के पास बचाव समाप्त करने के अतिरिक्त अन्य कोई विकल्प नहीं है; १९५८ के

अधिनियम के अन्तर्गत, नियंत्रक जिसने न्यायालय का स्थान लिया है, के पास इस विषय में विवेकाधिकार है, जिससे समुचित मामलों में किराए के भुगतान में चूक होने पर भी यदि वह न्यायिक विवेक का प्रयोग करते हुए अभिलेख की सामग्री के आधार पर संतुष्ट है तो किसी मामले के तथ्य व परिस्थितियों में बचाव समाप्त करने से इंकार कर सकता है।

१६- विस्तीर्णता से कहा जाए तो अधिनियम १९५२ का अधिनियम १९५८ के साथ परिशीलन प्राथमिक रूप से निम्नलिखित परिवर्तन दर्शित करता है-

(i) अधिनियम १९५२ की धारा १३ (५) का उद्देश्य केवल मकान मालिक के हित की सुरक्षा करना था। अधिनियम १९५८ की धारा १५ (१) का उद्देश्य प्राथमिक रूप से किराएदार के लाभ के लिए है जो धारा १५ (१) के अन्तर्गत पारित आदेश का अनुपालन करके अपनी बेदखली से बचने के लिए एक और अवसर प्राप्त करता है। धारा १५ (१) के अन्तर्गत पारित आदेश का अनुपालन करके किराएदार याचिका प्रस्तुति के पूर्व भुगतान करने या अदा करने की अपनी विफलता के परिणाम को भी टालता है।

(ii) अधिनियम १९५२ की धारा १५ (५) के अन्तर्गत चूक की दशा में न्यायालय बचाव समाप्त करने के लिए बाध्य थी जबकि अधिनियम १९५८ की धारा १५ (७) के अन्तर्गत धारा १५ (१) या धारा १५ (२) के अन्तर्गत पारित आदेश के अनुपालन में चूक की दशा में नियंत्रक के पास बचाव समाप्त करने का विवेकाधिकार है तथा प्रत्येक मामले के तथ्य व परिस्थितियों में इसका सदैव परीक्षण किया जा सकता है।

(iii) अधिनियम १९५८ के अन्तर्गत धारा १५ (१) के आदेश का अनुपालन करके किराएदार बेदखली आवेदन को असफल कर सकता है जबकि अधिनियम १९५२ के अन्तर्गत अधिनियम १९५२ की धारा १३ (५) के आदेश का अनुपालन करने पर भी किराएदार के पास इस प्रकार का लाभ उपलब्ध नहीं था।

१७- अधिनियम १९५२ की धारा १३ (५) एवं अधिनियम १९५८ की धारा १५ (७) की तुलना करने पर अपरिहार्य परिणाम यह होगा कि अधिनियम १९५८ की धारा १५ (१) के अन्तर्गत पारित किए गए आदेश के अनुपालन में किराया अदा करने में की गई चूक की स्थिति में न्यायालय बचाव समाप्त करने के लिए बाध्य नहीं होगा तथा विवेकाधिकार जो निश्चित ही न्यायपूर्ण दृष्टिकोण व सावधानीपूर्वक हो, का प्रयोग करते समय नियंत्रक के लिए प्रत्येक मामले के तथ्यों का परीक्षण किया जाना सदैव अनुज्ञेय है।

१८- अधिनियम १९५८ की धारा १५ (७) की व्याख्या करते हुए न्यायमूर्ति व्ही.आर. कृष्णा अय्यर द्वारा **सुश्री संतोष मेहता विरूद्ध ओम प्रकाश व अन्य** में अभिनिर्धारित किया गया है कि एक पक्षकार के बचाव को समाप्त करने की शक्ति एक असाधारण कदम है और इसका प्रयोग केवल तभी किया जाना होता है जब किराएदार के भाग पर "अवज्ञा की मनोदशा" या "घोर लापरवाही" का पता चलता है। धारा १५ (७) को किराएदार को बेदखल करने के लिए

"बूबी ट्रैप" के रूप में प्रयोग करने वाले मकान मालिक के विरूद्ध इस न्यायालय द्वारा सचेत किया गया। यह उचित होगा कि उस पाठ्यांश को पुनः उद्धृत किया जाए जो उस दृष्टिकोण को इंगित करता है जिसे ऐसे मामलों में न्यायालय द्वारा अपनाया जाना है। सुसंगत कण्डिका ३ व ४ निम्नानुसार हैंः-

"३. हमें प्रावधानों का अर्थान्वयन करते समय सामाजिक सरोकारपूर्ण परिप्रेक्ष्य को अपनाना चाहिए और तब यह स्पष्ट होगा कि नियंत्रक ऐच्छिक शक्ति से सशक्त है। वह किराएदार के बचाव को समाप्त कर सकता है या नहीं कर सकता है। न्यायिक विवेक, जिसमे अन्तर्निहित आत्म संयम होता है, मष्तिष्क में कानून की योजना होता है, मामले में विद्यमान परिस्थितियों के सारांश को अनदेखा नहीं कर सकता है तथा शक्ति का प्रयोग करते समय ऐसी सोच रखता है कि न्यायालय में एक पक्ष के बचाव को समाप्त करना एक असाधारण कदम है, न कि किराया अदा करने मात्र की विफलता के परिणामस्वरूप किया जाने वाला दण्डात्मक चरम की नियमित कार्यवाही। सर्वप्रथम वहां किराए का भुगतान करने में ऐसी विफलता होनी चाहिए, जो संदर्भ में ऐच्छिक विफलता, जानबूझकर की गई चूक या स्वैच्छिक अननुपालन को इंगित करती हो। द्वितीयतः यह धारा कोई स्वचालित शस्त्र प्रदत्त नहीं करती है किन्तु यांत्रिक परिणाम विहीन बुद्धिमान विवेक विहित करती है तथा हठधर्मिता दूर करने की शक्ति प्रदान करती है। इस प्रकार यदि कोई किराएदार किराए का भुगतान करने या जमा करने में विफल रहता है या इन्कार करता है तथा न्यायालय अवज्ञापूर्ण मनोदशा या घोर लापरवाही देखता है तो किराएदार बचाव में सुने जाने के अपने अधिकार को खो देता है। अंतिम उपाय को प्रथम उपाय के रूप में परिवर्तित नहीं किया जा सकता है; किराएदार को बाहर निकालने के लिए न्यायालय के दण्डात्मक निर्देश का प्रयोग बूबी ट्रैप के रूप में नहीं किया जा सकता है। एक बार यह उद्देश्यात्मक व्याख्या आती है तो बचाव समाप्त करने का आवहान करने के विषय की गलतफहमी की धुंध गायब हो जाती है। किसी प्रकरण की वास्तविकताओं को अनदेखा करना शक्ति के आधारभूत कर्तव्य से विरत रहना है।

४. ..... धारा १५ (७) के अन्तर्गत बचाव समाप्त किए जाने का प्रभाव किराएदार को धारा १४ के संरक्षण से वंचित करने का होता है और इसलिए अधिनियम की धारा १५ (७) की शक्तियों का प्रयोग उचित सावधानी के साथ किया जाना चाहिए।"

१९- इस विषय पर दिये गये पश्चातवर्ती निर्णय भी यह मानते हैं कि किराएदार की ओर से किराए का भुगतान करने की विफलता मात्र बचाव समाप्त करने के आदेश को उचित ठहराने के लिए पर्याप्त नहीं है। यह केवल एक ऐच्छिक विफलता, जानबूझकर की गई चूक या स्वैच्छिक अननुपालन है जो न्यायालय में निहित असाधारण शक्ति के प्रयोग को आवश्यक बनाता है। इससे भी महत्वपूर्ण है कि अधिनियम १९५८ की धारा १५ (७) की बचाव समाप्त करने या न करने की न्यायालय की विवेकीय शक्ति की प्रचुरता किराया नियंत्रक के पास है; कहने की आवश्यकता नहीं है कि अधिनियम १९५८ की धारा १५ (७) के अन्तर्गत बचाव

समाप्त करने का प्रभाव किराएदार को धारा १४ के अन्तर्गत उसे उपलब्ध संरक्षण से वंचित करने का होता है तथा यह अनिवार्य है कि अधिनियम १९५८ की धारा १५ (७) के अन्तर्गत किराया नियंत्रक में निहित ऐसी शक्ति का प्रयोग सम्यक् देखभाल एवं सावधानीपूर्वक किया जाना चाहिए।

२०- **श्रीमती कमलादेवी विरूद्ध श्री वासुदेव** में इस न्यायालय द्वारा दोहराया गया है कि बचाव समाप्त करने की शक्ति किराया नियंत्रक में ऐसा करने के विवेक के साथ निहित होती है। मात्र एक चूक हो जाने के कारण किराया नियंत्रक के लिए बचाव समाप्त करना आज्ञापक नहीं है। अनिवार्यतः प्राधिकरण में निहित विवेक का प्रयोग निश्चित ही प्रत्येक मामले के तथ्य व परिस्थितियों पर निर्भर करता है और यह सामान्य नियम के रूप में प्रयोग किये जाने योग्य नहीं है।

२१. **मैसर्स जैन मोटर कार कंपनी दिल्ली विरूद्ध श्रीमती स्वयंप्रभा जैन एवं एक अन्य** का पश्चातवर्ती निर्णय शक्ति प्रयोग करने को विनियमित करने वाले वैधानिक मानकों को परिवर्तित नहीं करता है किन्तु उस मामले के तथ्य व परिस्थितियों पर अधिक चर्चा करता है जिनमें शक्ति का सही उपयोग किया जाना पाया गया।

२२. अधिनियम १९५८ की धारा १५ (७) के अन्तर्गत एक किराएदार के बचाव को समाप्त करने की व्याख्या का संदर्भ पश्चात में इस न्यायालय के समक्ष **एयरो ट्रेडर्स (पी) लिमि. विरूद्ध रविन्दर कुमार सूरी** में विचार हेतु आया।

२३. इस न्यायालय के **अमृत लाल विरूद्ध शिवनारायण गुप्ता** के पश्चातवर्ती निर्णय का संदर्भ दिया जा सकता है जिसमें यह अभिनिर्धारित किया गया था कि अधिनियम १९५८ की धारा १५ की उपधारा (७) किराया नियंत्रक को एक विवेकाधिकार प्रदान करती है कि यदि काई किराएदार अधिनियम १९५८ की धारा १५ के अन्तर्गत अपेक्षित भुगतान या जमा करने में विफल रहता है तो किराया नियंत्रक बेदखली के विरूद्ध बचाव समाप्त करने का आदेश दे सकता है और आवेदन की सुनवाई के साथ आगे बढ़ सकता है। आगे यह भी अभिनिर्धारित किया गया है कि अधिनियम १९५८ की धारा १५ (१) का प्रत्येक उल्लंघन स्वमेव किराएदार के बचाव को समाप्त नहीं करेगा। अधिनियम १९५८ की धारा १५ (७) के अन्तर्गत नियंत्रक के पास निहित विवेकाधिकार का विवेकपूर्ण तरीके से प्रयोग किया जाना चाहिए और यदि अधिनियम १९५८ की धारा १५ (१) के आदेश का अननुपालन आदेश की तर्कहीन अवहेलना को दर्शाता है, या जब अननुपालन दोहराया जाता है या जब उचित औचित्य नहीं दिया जाता है या ऐसा अन्य समान कारण जानबूझकर, अपमानजनक, या लापरवाही और लापरवाहीपूर्ण व्यवहार किराएदार के बचाव को समाप्त करने का कारण बन सकता है।

२४. प्रतिपादित विधि से यह स्पष्टतः प्रकट होता है कि अधिनियम १९५८ की धारा १५ (७) के अन्तर्गत निहित शक्ति विवेकीय है तथा आज्ञापक नहीं है तथा अवज्ञाकारी एवं जानबूझकर की गई चूक पर निर्भर करती है तथा इसे सामंजस्य रूप से समझा जाना चाहिए जिससे किराएदार एवं मकान मालिक के अधिकारों एवं दायित्वों में संतुलन किया जा सके तथा अधिनियम १९५८ की धारा १५ (७) की शक्ति असाधारण होने से सम्यक् देखभाल व सावधानी के साथ उपयोग की जानी चाहिए।

२५. हस्तगत मामले में आते हुए, ऐसे भिन्न-भिन्न पहलू हैं, जिनसे किराए के भुगतान की चूक के प्रश्न को देखा जाना चाहिए। प्रथमतः प्रश्न यह है कि बकाया जो न्यायालय ने निर्धारित किया और अपीलार्थी को भुगतान करने हेतु निर्देशित किया गया का भुगतान किया जा चुका है। इसका उत्तर वास्तव में सकारात्मक है। किराया नियंत्रक द्वारा आदेश दिनांक २१ अप्रैल, २००८ पारित करते हुए अपीलार्थीगण को ०१ नवंबर, २००७ से अप्रैल, २००८ तक के किराए के बकाए को जमा करने तथा भविष्य में ६६/- रुपये प्रतिमाह का किराया प्रत्येक उत्तरवर्ती महीने की १५ तारीख तक भुगतान करने हेतु निर्देशित किया गया। यह विवादित नहीं है कि अपीलार्थीगण ने बकाए को जमा करने के आदेश का अनुपालन दिनांक २१ अप्रैल, २००८ को कर दिया था। वास्तव में उन्होंने दस माह के अग्रिम किरायों का नवंबर, २००७ से अप्रैल, २००८ तक के बकाया के आदेश दिनांक २१ अप्रैल, २००८ के अनुपालन में जमा करने के साथ भुगतान कर दिया था।

२६- दूसरा अंग जो तीनों चरणों में छूट गया है वह यह है कि नवंबर, २००७ से अप्रैल, २००८ तक के बकाया किराए के अतिरिक्त अपीलार्थीगण ने दस महीने के अग्रिम किराए की समतुल्य राशि का भुगतान किया, हालांकि ऐसा करने का न तो कोई विधिक दायित्व था और न ही किराया नियंत्रक द्वारा ऐसा भुगतान करने का कोई निर्देश दिया गया था। यह विवादित नहीं है कि अपीलार्थीगण द्वारा दस महीने के अग्रिम किराए का भुगतान किसी स्वीकृत दायित्व को दर्शित नहीं करता है और तथ्य यह है कि दस महीने का अतिरिक्त किराया जो अपीलार्थीगण द्वारा ०१ नवंबर, २००७ से अप्रैल, २००८ की अवधि के अलावा भुगतान किया गया, न तो भविष्य के किराए में समायोजित किया गया और न ही अपीलार्थीगण को वापिस किया गया।

२७- यह ध्यान देना प्रासंगिक हो सकता है कि यद्यपि प्रत्यर्थीगण-मकान मालिक द्वारा ०१ जनवरी, २००७ से अक्टूबर, २००७ तक के बकाए का दावा किया गया किंतु उसे अपीलार्थीगण द्वारा विवादित किया गया, जैसा कि आदेश दिनांक २१ अप्रैल, २००८ से प्रकट होता है लेकिन चूंकि हम अधिनियम, १९५८ की धारा १५ (१) के अन्तर्गत अपनी शक्तियों का प्रयोग करते हुए किराया नियंत्रक द्वारा पारित आदेश के अननुपालन के कारण बचाव समाप्त करने के प्रश्न का परीक्षण कर रहे हैं, इसलिए आदेश दिनांक २१ अप्रैल, २००८ के अधीन

बकाए का भुगतान नवंबर, २००७ से अप्रैल, २००८ तक किया जाना था और २१ अप्रैल, २००८ को भुगतान किए गए दस महीने के अतिरिक्त किराए को वास्तव में प्रत्यर्थीगण द्वारा ०१ मई, २००८ से शुरू होने वाली अवधि के भविष्य के किराए में समायोजित किया जाना था और यह एक मात्र विधिक विकल्प था तथा प्रत्यर्थीगण-मकान मालिक द्वारा अभिस्वीकृत उक्त अतिरिक्त राशि, न्यायालय के किसी आदेश के अभाव में, प्रत्यर्थीगण-मकान मालिक द्वारा अपीलार्थीगण-किराएदार के लाभ के लिए प्राप्त करना व धारित करना मानी जानी चाहिए और उस दृष्टि से भविष्य के दायित्व के लिए ऐसी अतिरिक्त राशि का समायोजन उस राशि के विनियोग का एक मात्र संभव विधिक रूप से वैध तरीका है। इस प्रकार, २१ अप्रैल, २००८ को अपीलार्थीगण द्वारा भुगतान की गई राशि में मई, २००८ से फरवरी, २००९ (दस महीने) तक की भविष्य के किराए की अवधि शामिल थी।

२८- तथ्यात्मक मैट्रिक्स का आगे का यह अंग भी अभिलेख से निर्विवादित है कि फरवरी, २००९ तक के किराए के भुगतान के समायोजन उपरान्त २७ जून, २००८ को एक महीने के और १७ दिसम्बर, २००८ को पांच महीने के जमा किए गए किराए में ३१ अगस्त, २००९ तक की अवधि शामिल हो जाती है। इसका तात्पर्य है कि अपीलार्थीगण ने ३१ अगस्त, २००९ तक के अग्रिम किराए का भुगतान कर दिया है। यही नहीं, उनके द्वारा आगे की गई दो और जमा, पहली ०१ मई, २००९ और दूसरी ०५ मई, २००९, के भुगतान को विचार में लिया जाता है तो अपीलार्थीगण ने ०१ सितम्बर, २००९ से शुरू होने वाले सम्पूर्ण किराया दायित्व का उन्मोचन कर दिया। अपीलार्थीगण द्वारा दिनांक २१ अप्रैल २००८ आगे २७ जून २००८, १७ दिसम्बर २००८, ०१ मई २००८ और ०५ मई २००८ को किया गया किराए का भुगतान/जमा विवादित नहीं है और इसमें ०१ सितम्बर, २००९ से शुरू होने वाली एक वर्ष और नौ महीने की अवधि शामिल हो जाती है।

२९- यह अभिलेख से स्पष्ट रूप से प्रकट होता है कि किराया नियंत्रक द्वारा दिनांक २१ अप्रैल, २००८ को पारित आदेश की दिनांक को ही, अपीलार्थीगण द्वारा जमा किए जाने हेतु निर्देशित बकाया का भुगतान किया गया था और किराया नियंत्रक द्वारा बचाव समाप्त करने के आदेश की दिनांक को भी, सम्पूर्ण मध्यवर्ती अवधि और उसके आगे के लिए किराए का भुगतान किया जा चुका था और ऐसा प्रतीत होता है कि उन महीनों के लिए उपयुक्त मिलान और समायोजन किए जाने की आवश्यकता थी जिनके लिए किराया देय था लेकिन जिस बात पर विवाद नहीं किया जा सकता वह यह है कि किराया नियंत्रक के निर्देशों के अनुसार अपीलार्थीगण को जिस राशि का भुगतान करने के लिए कहा गया था उसके अनुसरण में जो सभी सुसंगत समय पर जमा/भुगतान की गई वह मकान मालिक को देय से अधिक थी। उक्त परिस्थिति में, अपीलार्थीगण-किराएदारों के विरूद्ध भुगतान करने में अवज्ञाकारी विफलता और जानबूझकर चूक का आरोप आधारहीन है।

३०- प्रश्न यह है कि क्या किराएदार उक्त भुगतान रोकने में अवज्ञाकारी आचरण के दोषी थे। उक्त प्रश्न का उत्तर देते हुए, पट्टान्तरित परिसर के लिए देय किराए की राशि एक ऐसा कारक हो सकती है, जिसे दरकिनार नहीं किया जा सकता है किन्तु हस्तगत मामले के तथ्य व परिस्थितियां मकान मालिक को देय किसी राशि के भुगतान न करने में किसी ऐसी लापरवाही, अनादर या अवज्ञा को नहीं सुझाती हैं जो उस "असाधारण कदम" को अनुज्ञात करे जिससे किराएदार प्रत्यर्थीगण-मकानमालिक के विरूद्ध अपने विवाद में प्रतिरक्षाविहीन हो जाए।

३१- हमारी राय में, किराया नियंत्रक का निर्णय जो आक्षेपित निर्णय द्वारा दिल्ली उच्च न्यायालय के एकल न्यायाधीश द्वारा पुष्ट है और जिसके द्वारा अपीलार्थीगण के बचाव समाप्त करने के निर्णय को यथावत रखा गया है जिससे उनके बेदखली याचिका को लड़ने और बचाव लेने से वंचित हो जाने से निश्चित ही प्रतिकूल परिणाम होते हैं, विवेकपूर्ण तथा सावधानीपूर्वक नहीं किया गया है तथा उपरोक्त कारणों से आक्षेपित निर्णय स्थिर रखे जाने योग्य नहीं है तथा अपास्त किए जाने योग्य है।

३२- ऐसा प्रकट होता है कि प्रत्यर्थीगण द्वारा बेदखली आवेदन वर्ष २००७ में प्रस्तुत किया गया है और लगभग १२ वर्ष व्यतीत हो चुके हैं तथा इस न्यायालय में कार्यवाही के लंबित होने के कारण प्रकरण में कार्यवाही नहीं हो सकी है, हम यह संप्रेक्षित करना उचित पाते हैं कि किराया नियंत्रक/सक्षम प्राधिकारी मामले की कार्यवाही तथा लंबित बेदखली आवेदन को विधि के अनुसार यथाशीघ्र गुणदोष पर निर्णीत कर सकते हैं जो अवधि किसी भी स्थिति में एक वर्ष से अधिक नहीं होगी।

३३- परिणामस्वरूप, अपील सफल होती है तथा दिल्ली उच्च न्यायालय का आक्षेपित निर्णय दिनांक १० मई, २०११ जो किराया नियंत्रक/अधिकरण के आदेश की पुष्टि करता है, उपरोक्त टिप्पणियों के साथ अपास्त किया जाता है। कोई परिव्यय नहीं।

३४- लंबित आवेदन, यदि कोई हो, निराकृत।

अपील स्वीकृत।

अनुवाद द्वारा
आशीष कुमार मिश्रा